Shodh Sangam Patrika
E-ISSN: 3049-0707, Volume 3 | Issue 1 | (Jan – Mar 2026)

भूमंडलीकरण और मनोज रूपड़ा के उपन्यासों में व्यक्त अकेलापन

जितेन्द्र [1], डॉ. अंजन कुमार [2]
[1] शोधार्थी, हिन्दी विभाग, कल्याण स्नातकोत्तर महाविद्यालय भिलाई नगर (छ.ग.)
[2] शोध-निर्देशक (सहायक प्राध्यापक), हिन्दी विभाग, कल्याण स्नातकोत्तर महाविद्यालय भिलाई नगर (छ.ग.)

शोध सारांश -

अकेलापन एक भावनात्मक एवं मानसिक स्थिति है। जिसमें व्यक्ति अपनों या अपने परिवेश के बीच स्वयं को अकेला महसूस करता है। अकेलापन से जूझ रहा व्यक्ति एक समय बाद घुटन एवं कुंठा का शिकार हो जाता है। अकेलेपन की भावना से गुजर रहे व्यक्ति को जीवन निरर्थक लगता है। वह एकाकीपन में निरन्तर रिक्तता और उद्देश्यहीनता का अनुभव करता है। अकेलापन आधुनिक सभ्यता की देन है औद्योगिकीकरण और नगरीकरण के प्रभाव से इसका विकास हुआ है। अकेलेपन की अभिव्यक्ति स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कथा साहित्य में अधिक दिखाई देती है। भूमंडलीकरण के बाद अकेलेपन की भावना निरंतर बढ़ती गयी है साथ ही इसकी स्थिति पहले से अधिक चिंताजनक हुई है। आज के समय में अकेलापन जीवन की एक प्रमुख समस्या बनती जा रही है। मनोज रूपड़ा ने अपने उपन्यासों में वर्तमान भूमंडलीकरण के संदर्भ में मनुष्य के अकेलेपन को बहुत गहराई के साथ चित्रित किया है। मनोज रूपड़ा के उपन्यास 'प्रतिसंसार' के आनंद का अकेलापन पूँजीवाद जीवन शैली के दुष्प्रभाव स्वरूप पारिवारिक विखंडन से ऊपजा अकेलापन है। इसी तरह 'काले अध्याय' उपन्यास के नायक के अकेलेपन में भूमंडलीकरण के कारण आदिवासी समुदाय का विखंडन एवं विस्थापन निहित है। इसी उपन्यास में कैप्टन दत्त के अकेलेपन के पीछे अतीत की हिंसक घटनाओं के साथ समकालीन पूँजीवादी व्यवस्था के अनिश्चित, अस्थिर और छद्म भरी प्रवृत्ति कारक है।

मुख्य शब्द - भूमंडलीकरण, अकेलापन, घुटन, पूँजीवाद, पारिवारिक विखंडन, स्वार्थपन, अजनबियत, निरर्थकताबोध।

मूल आलेख -

अकेलापन एक भावनात्मक-मानसिक स्थिति है जिसमें व्यक्ति अपनों या अपने परिवेश के बीच होते हुए स्वयं को अकेला महसूस करता है। इस स्थिति में वह अपने आप को भावनात्मक रूप से अलग-थलग पाता है। अकेलापन की भावना उसे बाद में घुटन की स्थिति में पहुँचा देती है। अकेलापन आधुनिक सभ्यता की देन है। अकेलेपन की अभिव्यक्ति स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कथा साहित्य में अधिक दिखाई देती है। भूमंडलीकरण के बाद अकेलेपन की यह भावना निरंतर बढ़ती गयी है साथ ही इसकी स्थिति पहले से अधिक चिंताजनक हुई है।

भारत में संयुक परिवार की परंपरा रही है। जहाँ पूरा कुटुम्ब एक साथ एक छत के नीचे रहते थे। एक-दूसरे के सुख-दुख में शामिल होते थे। सामाजिक रूप से भी वे एक-दूसरे से अधिक जुड़े हुए थे लेकिन आधुनिक पूँजीवादी नगरी सभ्यता के विकास के कारण संयुक्त परिवार की परंपरा धीरे-धीरे खंडित होती गयी है। संयुक्त परिवार पहले एकल परिवार में फिर एकल परिवार व्यक्ति के एकाकीपन के रूप में बिखरता गया है। भूमंडलीकरण के समानांतर सूचना प्रौद्योगिकी के विकास ने व्यक्ति को और भी एकाकी किया है।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है उसका विकास समाज के बीच रहकर ही संभव है लेकिन नित्य परिवर्तित होती सभ्यतागत विकास के कारण वह घर, परिवार एवं समाज के बीच रहकर भी उनसे दूर होता जा रहा है। घर-परिवार एवं समाज के लोगों के बीच एक-दूसरे के प्रति आत्मीय एवं भावनात्मक संबंध होता है, जो उसे जीवन के दुखद और कठिन समय में सहानुभूति और सांत्वना के रूप में इन विकट परिस्थितियों से निकलने में मदद करता है लेकिन नित्य परिवर्तित होते सभ्यतागत विकास ने मनुष्य की भावनाओं एवं संवेदनाओं को क्षरित किया है जिसके कारण व्यक्ति अपने स्वार्थ सम्बन्धों में सिमटकर घर-

परिवार एवं समाज से पराया होता जा रहा है। बीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में जीवन में दिखाई देने वाला एकाकीपन इक्कीसवीं सदी के भूमंडलीय व्यवस्था में अधिक तेजी से बढ़ी है। अकेलापन आज के समय में जीवन की एक प्रमुख समस्या है। समकालीन कथा साहित्य में अकेलापन की व्यापक अभिव्यक्ति को देखा जा सकता है। मनोज रूपड़ा ने अपने उपन्यासों में वर्तमान भूमंडलीय परिवेश में मनुष्य के अकेलापन को गहराई के साथ चित्रित किया है।

'प्रतिसंसार' उपन्यास का नायक आनंद एक महानगर के सबसे बड़े पूँजीपति सेठ बालकिशन सेठिया का एकलौता बेटा है। वह हमेशा सुख-सुविधा से घिरा रहता है। उसे 'हिस्टीरिया' नामक बीमारी है इसीलिए उसे बाहरी दुनिया से दूर रखा जाता है। क्योंकि उसे बार-बार हिस्टीरिया का दौरा पड़ता रहता है। इस बीमारी के कारण हमेशा एक निजी नर्स उसके पास रहती है। जो उसके स्वास्थ्य के साथ उसके खाने-पीने, नहाने-धोने, कपड़े-लत्ते सभी चीज का बराबर ध्यान रखती है। इस विलासितापूर्ण साधनों से घिरे होने के बावजूद आनंद अपने जीवन में अकेलापन महसूस करता है।

अकेलापन भावनात्मक अभाव से ऊपजता है इसलिए आराम एवं विलासी साधनों की उपलब्धता अकेलेपन के अभाव को नहीं भर सकते। आनंद का यह अकेलापन अपने पिता और माँ के वांछित स्नेह या प्रेम के अभाव के कारण है। आनंद का परिवार एक विखंडित परिवार है। पिता सेठ बालकिशन सेठिया एक पूँजीपाति व्यक्ति है, जो हर व्यक्ति, वस्तु एवं घटना को सिर्फ लाभ और हानि की दृष्टि से देखता है। किसी के प्रति उसके भीतर कोई संवेदना नहीं है, अपितु पूँजीवादी स्वार्थ है। आनंद की माँ अनीता से शादी उन्होंने उनकी इच्छा के विरूद्ध, सिर्फ़ वारिस की चाहत में की और अनिच्छित ढंग से उसे तांत्रिक द्वारा गर्भवती भी बनाया। आनंद को लेकर भी उनका अपना निजी स्वार्थ है। वह आनंद को अपने व्यापारिक साम्राज्य के वारिस के रूप में तैयार करना चाहता है, इसी कारण वह उसके बीमारी को लेकर कुछ चिंतित रहता है और विश्व के बड़ों डाक्टरों एवं तांत्रिक दोनों के जरिए समानांतर रूप से आनंद का ईलाज करवाता है। जब दोनों ही माध्यमों से ईलाज करवाने पर आनंद की बीमारी में कोई खास सुधार नहीं होता तब वह झुझला जाता है और उसी झुझलाहट में बड़बड़ाते हुए आनंद से कहता है "मैंने अब तक फिजूल में इन डॉक्टरों और तान्त्रिकों पर भरोसा किया-वे सब बेकार हैं, इन्हें सिर्फ बकवास करना और लोगों को चूतिया बनाना आता है। इन बिना पेंदी के लोटों को ठोकर मारो और मेरे तौर-तरीके अपनाओ, सिर्फ मुनाफे के बारे में सोचो... तुम्हारी सब बीमारी दूर भाग जाएगी। एक सरमायेदार की औलाद को मुनाफे के अलावा कुछ नहीं सोचना चाहिए।"[1]

आनंद के पिता के इन विचारों एवं उपदेशों में सिर्फ लाभ अर्जित करने और उसके बारे में सोचने की बात है आनंद के स्वास्थ्य को लेकर या उसके प्रति कोई संवेदना नहीं है। वह चाहते हैं कि आनंद भी उन्हीं की ही तरह सिर्फ मुनाफे के बारे में सोचें जैसे वे सोचते हैं क्योंकि इसी सोच के तहत उन्होंने अपने व्यापार एवं उद्योग को व्यापक स्तर पर फैलाया और वर्तमान में वे महानगर के सबसे बड़े उद्योगपति हैं।

आनंद बचपन से माँ और पिता के प्रेम से वंचित रहता है। उसकी माँ और पिता बीमारी की अवस्था में उसे एक नर्स के भरोसे छोड़कर अपनी-अपनी दुनिया में व्यस्त रहते हैं। पिता अपने व्यवसाय को आगे बढ़ाने अपने पूँजीवादी अहंकार में लिप्त अपनी प्रतिष्ठा और मुनाफे के बारे में सोचता रहता है और माँ एक जबरदस्ती की शादी और अपने प्रेमी के साथ घर न बसा पाने से दुखी शराब में डूबी रहती है। दोनों उसकी बीमारी की अवस्था में उसे कुछ देर देखकर चले जाते हैं। बिना माँ-बाप और दोस्त के आनंद एक नर्स के निगरानी में बिस्तर में पड़ा रहता है। वह कुछ देर वीडियो गेम खेलकर अपना मन बहलाने की कोशिश करता मगर यांत्रिक साधनों से कब तक जी बहल सकता है कुछ देर बाद वह उससे भी ऊब जाता। आनंद के अकेलेपन के रूप में इस भूमंडलीय व्यवस्था से ऊपजे अकेलेपन को लेखक ने वीडियों गेम जैसे यांत्रिक खेल के जरिए प्रतीकात्मक रूप से व्यक्त किया है -

"और वह खेलने लगता है

एक यान्त्रिक खेल

जो हाड़-मांस के संगी-साथियों के बजाय

कम्प्यूटर चित्रों के साथ खेला जाता है

जिसमें न कोई संवाद होता है

न कोई मानवीय क्रिया-कलाप

……

उस छब्बीस इंच के चौकोर में एक बहुत सशक्त

और ऐन्द्रिक रूप से भौतिक इलेक्ट्रॉनिक शक्ति बहती है

वह सृजित करती है एक रंगारंग भरा-पूरापन और

क्षण-भंगुर उछल-कूद जो मनुष्य को इस ऐतिहासिक समय में अलग-थलग और अकेला करती हैं”[2]

आनंद का यह अकेलापन उसकी बढ़ती हुई उम्र के साथ बढ़ता जाता है। एक तो वह अपनी बीमारी के कारण कुछ भी कार्य न कर पाने के हीनताबोध से जूझता है। दूसरा परिवार के होते हुए भी परिवार का सुख न मिल पाने के कारण वह दुखी रहता है। उसकी बीमारी के चलते उसे वास्तविक दुनिया से दूर घर के चारदीवारी में कैद रखा जाता है। बाहरी दुनिया से असम्पृक्त होने के कारण वह बाहरी दुनिया के ठोस यथार्थ से अनजान रहता है, लेकिन जब वह बाहरी दुनिया से रूबरू होता है तो वहाँ भी वह अपने आपको अकेला ही पाता है। अकेलेपन की अवस्था में आनंद के स्वगत संवाद में भूमंडलीय व्यवस्था के कारण असंवेदित और विखंडित होते मनुष्य की विडम्बना व्यक्त हुई है “मेरी बिलबिलाती आवाज किसी को सुनाई नहीं देती।……मैं पत्थर की मूर्तियों से बात करता हूँ और जीवित आदमी मुझे कभी-कभी पत्थर की मूर्तियों जैसे लगते हैं।”[3]

इस पूरे उपन्यास में आनंद अपनी बीमारी के कारण फैटेंसी की दुनिया में खोया रहता है। लेकिन उपन्यास के अंत में वह अपने जीवन को एक नई दिशा देने के लिए अपनी इच्छा से पहली बार घर के बाहर निकलता है और रोड किनारे एक कुत्तिया एवं उसके पिल्ले को देखकर कुछ देर उनके साथ खेलने लगता है। कुछ देर बाद वह कुत्तिया और उसके पिल्ले आनंद को छोड़कर चले जाते हैं। इस स्थिति में आनंद अपने आप में फिर अकेलापन महसूस कर भावुक हो जाता है। कथाकार उसकी मानसिक स्थिति को चित्रित करते हुए लिखते हैं “और उनकी मुलायम, चिकनी मखमली खाल के स्पर्श को अपने हाथों में महसूस करते हुए आनन्द ने अपने आप को फिर अकेला और अपने आप से संसार को इतना विरक्त अनुभव किया कि अन्ततः उसे लगा कि यही उसकी नियति है क्योंकि वह अशक्त है। बीमारी से उत्पन्न कायरता और अकेलेपन के डर ने उसे बच्चों जैसे आचरण और रोने जैसी हालत तक पहुँचा दिया।”[4]

अकेलेपन में आनंद अपने जीवन को निरूद्देय पाता है। परिवारिक एवं सामाजिक होने की कोशिश में भी वह अपने आपको निरंतर अकेला ही पाता है। क्योंकि इस समय में सबकुछ विखंडित होकर अपने आप में सिमट रहा है। एक-दूसरे से जुड़ाव महज एक स्वार्थवश जुड़ाव होता है। आनंद की स्थिति इस पूरे उपन्यास में अकेलेपन की स्थिति एवं निरर्थकताबोध से जूझते हुए मनुष्य की है। आनंद आज के पूँजीवादी समाज में अकेलेपन से जूझ रहे व्यक्ति का प्रतिनिधित्व करता हुआ नज़र आता है।

मनोज रूपड़ा के दूसरे उपन्यास ‘काले अध्याय’ का नायक भी ‘प्रतिसंसार’ के आनंद की तरह अकेलेपन से जूझता हुआ सामने आता है। आनंद का अकेलापन जहाँ पूँजीवाद महानगरीय जीवन के कारण है, वहीं इस उपन्यास के नायक का अकेलापन बस्तर के घने जंगलों के बीच सरकार एवं पूँजीवादी ताकतों की पहुँच एवं दुष्प्रभाव से उत्पन्न है। यहाँ नायक का अकेलापन आदिवासी समुदाय के विस्थापन, विखंडन एवं अपने जल-जंगल-जमीन की रक्षा के लिए नक्सली होने जाने के कारणों में निहित है। नायक की बड़ी बहन जिससे उसका गहरा जुड़ाव होता है वह एक दिन नक्सली संगठन में शामिल हो

उससे दूर हो जाती है। बहन के दूर हो जाने पर वह पहली बार जीवन में अकेलापन को अनुभव करता है। “मैंने पहले खूँटी-से चाबी निकालकर अपनी टीन की उस पिटारी को खोला। उसमें मेरे पुराने कपड़ों के अलावा कुछ नहीं था। फिर मैंने उस आले को गौर से देखा जिसमें बहन मेरे लिए कुछ न कुछ छोड़ जाया करती थी। उस आले में भी कुछ नहीं था। बहन मेरे लिए ऐसा कोई सन्देश छोड़कर नहीं गयी थी। जिसके सहारे मैं अपने आने वाले दिनों के बारे में कुछ तय कर सकूँ। मैंने एक गहरी साँस ली और जीवन में पहली बार खुद को बेहद अकेला महसूस किया।”[5]

बहन के दूर हो जाने के बाद वह अपने जीवन को निरुद्देय समय के प्रवाह में ढीला छोड़ देता है। हालाँकि बहन के दूर होने के बाद उसके कॉलेज के दोस्त धनंजय के आत्मीय संसर्ग से उसके जीवन को एक दिशा मिलती है और वह उसके साथ मुम्बई में इंजीनियरिंग की पढ़ाई करने चला जाता है। पढ़ाई के बाद उसका दोस्त अपने प्रयासों से उसकी नौकरी ‘ग्रेड इंस्टंट शिपिंग कंपनी’ में लगवा देता है लेकिन दूसरे शिपिंग कंपनी में काम करने के कारण धनंजय भी उससे दूर हो जाता है। जहाज पर अपनी पहली यात्रा की अनुभूति में कुछ देर के उत्साह के बाद वह पुनः अकेलेपन के बोध से भर उठता है। “अब मैं वहाँ हूँ, जहाँ होना चाहता था। मेरे सामने असीम विस्तार है। इतना ज्यादा सम्मोहक कि खुद को नियन्त्रित कर पाना मुश्किल हो गया। मैंने रेलिंग को मजबूती से पकड़ लिया और क्षितिज पर अपनी आँखों को टिकाए रखा समुद्र और आसमान जहाँ मिलते हैं वहाँ डूबता हुआ सूरज अपनी लालिमा बिखेर रहा था और उसकी रोशनी के नीचे समुद्र मन्द-मन्द कल्लोल कर रहा था। इस दृश्य में एक धैर्यपूर्ण उत्ताप था, सौम्यता थी और एक बिछी हुई लालिमा थी, मगर मैंने अपनी आँखें बन्द कर लीं। मैं अपने आपको बहुत अकेला और बहुत विरक्त अनुभव कर रहा था।”[6] नायक के जीवन में अकेलापन इस कदर रच बस गया है कि वह इच्छित नौकरी पाने और सुन्दर प्राकृतिक दृश्य को देखने के बाद भी बहुत देर तक उस उत्साह में नहीं ठहर पाता। बार-बार वह अकेलेपन की भावना से भर उठता है।

अपनी समुद्री यात्रा में उनका जहाज जब एक ऐसे द्वीप से गुजर रहा होता है जिस पर चीन, जापान और ताइवान जैसे देश अधिकार के लिए आपस में लड़ रहे हैं, तो वह अपने भीतर भी इस द्वीप की तरह विभाजन महसूस करता है और अपने आपको दो हिस्सों में बटा हुआ पाता है - “एक हिस्सा, जो कोरी और काली शून्यता ये भरा हुआ है, न कोई भाव, न कोई चाव, सिर्फ अकेलापन। जहाँ मैं अपने शरीर के साथ एकमत हो चुका हूँ। और दूसरा हिस्सा दुनिया के हाहाकार से भरा हुआ है जहाँ सैकड़ों हाथ ऊपर उठे हुए हैं और एक सामूहिक गुहार कर्णभेदी शोर में बदल गयी है।”[7]

यह अनुभूति इस भूमंडलीय समय में मनुष्य के विखंडन को दर्शाता है, नायक अपने व्यक्तित्व के विभाजन के किसी भी हिस्से में जीवन की उद्देश्यता और सुख की थाह को नहीं पाता है। एक मनुष्य को मनुष्य होने के अहसास के लिए जो भाव-संवेदना, प्रेम एवं सहानुभूति चाहिए वह इस भूमंडलीकरण के दौर में निरन्तर क्षरित हो रहा है। इस समय में अधिक से अधिक पूँजी एवं सुख-साधनों को जुटाना ही जीवन का ध्येय बनता जा रहा है। जिसके कारण कहीं न कहीं भावनात्मक पक्ष छूट रहा है। कहीं भावनात्मक व्यवहार दिखाई भी देता तो वह भी अधिकतर स्वार्थपूर्ति हेतु दिखावटी व्यवहार के रूप में दिखाई देता है।

नायक ‘मैं’ अपने भीतर अकेलेपन एवं विखंडन के अहसास से इतना भर जाता है कि उसे अपने आपमें अजनबीपन का बोध होने लगता है। “आइने में मेरी छवि मुझे देख रही थी। मैंने पहली बार अपने आप को इतने गौर से देखा था और पहली ही बार में मुझे लगा कि मेरी छवि बहुत सतही और उथले किस्म की है, उसमें गहराई नहीं है, वह मेरे अन्तस के साथ ठीक से घुली-रमी नहीं है, जैसे वह कोई अजनबी हो।”[8] अपने अकेलेपन और भीतर के खालीपन से उत्पन्न अजनबियत को मिटाने के लिए वह अपने आपसे बात करने लग जाता है।

“आखिर बात क्या है?" मैंने अपने आपसे पूछा।

मेरी छवि ने धीरे से सिर हिला दिया,

"कुछ नहीं।"

"फिर तुम इतने बुझे-बुझे और उदास क्यों रहते हो?"

मेरी छवि ने कोई जवाब नहीं दिया।"[9]

नायक के जैसे ही इस उपन्यास में जहाज के कैप्टन दत्त भी अकेलेपन से जूझते हुए दिखाई देते हैं। हालाँकि कैप्टन दत्त का अकेलापन समकालीन पूँजीवाद हिंसक अनुभूतियों के साथ अतीत के भयावह हिंसक स्मृतियों दोनों के प्रभाववश है। वर्तमान पूँजीवादी ताकतों के क्रूर क्रिया व्यवहार से मनुष्य एवं मानवता के नाश के प्रति वे चिंतित रहते हैं। अतीत की हिंसक घटनाओं से व्यथित एवं संभावित परिस्थितओं के प्रति उनका यह एकांत चिन्तन लगातार उन्हें अकेला करते जाता है। वे अपने आप में अकेले घुटते रहते हैं। उनकी स्थिति को बयाँ करते हुए नायक कहता है "उनके मन में क्या चल रहा था यह जानना बहुत मुश्किल था। चेहरे के हाव-भाव से भी कुछ अन्दाजा नहीं लगाया जा सकता था। उनकी दिन-ब-दिन बेजार होती जा रही दाढ़ी ने लगभग किसी खरपतवार का रूप ले लिया था और उनकी आँखों में एक तरह का सागरिक खारापन उतर आया था।"[10]

निष्कर्ष -

अतः कहा जा सकता है कि मनोज रूपड़ा के दोनों उपन्यास में भूमंडलीय व्यवस्था के कारण मनुष्य में बढ़ते अकेलेपन की गहन अभिव्यक्ति हुई है। 'प्रतिसंसार' उपन्यास के महानगरीय जीवन का आनंद हो या 'काले अध्याय' में बस्तर के बीहड़ जंगलों का नायक हो या बरसों से जहाज में नौकरी के दौरान दुनियाभर का सैर करने वाला कैप्टन दत्त हो, ये सभी इस पूँजीवादी भूमंडलीय व्यवस्था में यांत्रिक, स्वार्थी एवं हिंसक होती जाती दुनिया में अकेलेपन से जूझ रहे हैं। उनका यह एकाकीपन उन्हें विखंडित कर देता है। अवसाद एवं घुटन से भर देता है। जीवन उन्हें निरर्थक और निरूद्देय लगने लगता है। ये पात्र अपनी जीवन कथा के द्वारा समकालीन मनुष्य की भावनात्मक एवं मानसिक स्थिति को दर्शाते हैं।

संदर्भ-

1. रूपड़ा, मनोज, प्रतिसंसार, नई दिल्ली : भारतीय ज्ञानपीठ, संस्करण 2021, पृष्ठ 88
2. वही, पृष्ठ 15-16
3. वही, पृष्ठ 57
4. वही, पृष्ठ 104
5. रूपड़ा, मनोज, काले अध्याय, नई दिल्ली : भारतीय ज्ञानपीठ, संस्करण 2015, पृष्ठ 33
6. वही, पृष्ठ 41-42
7. वही, पृष्ठ 136
8. वही, पृष्ठ 137
9. वही, पृष्ठ 137
10. वही, पृष्ठ 113